International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 10-06-2026, Accepted: 10-07-2026, Published: 25-07-2026
Volume 8, Issue 3, 2026, Page No. 11-13

रामप्यारे रसिक के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का अध्ययन

डॉ. स्नेहलता निर्मलकर[1], नीलम सोनी[2]
[1] सह प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, डॉ.सी.व्ही. रमन वि.वि.करगी रोड कोटा बिलासपुर, छत्तीसगढ़, भारत
[2] शोधार्थी, हिन्दी विभाग, डॉ.सी.व्ही. रमन वि.वि.करगी रोड कोटा बिलासपुर, छत्तीसगढ़, भारत
DOI: https://doi.org/10.66856/ijrh.2026.8.3.8054

सारांश
बीसवीं शताब्दी के आरंभिक दशकों में प्रेमचंद ने उपन्यास और कहानियों को सामाजिक यथार्थ से जोड़कर गद्य साहित्य को जनसरोकारों से संपृक्त किया। इसी काल में राष्ट्रीय चेतना भी साहित्य के केंद्र में आई। छायावाद, प्रगतिवाद और प्रयोगवाद जैसी काव्य धाराओं के साथ–साथ गद्य साहित्य ने भी निरंतर नए–नए प्रयोग किए और विषय–वस्तु की विविधता को आत्मसात किया। यही कारण है कि आधुनिक काल को प्रायः हिन्दी गद्य का काल कहा जाता है। इसी परंपरा में राम प्यारे रसिक जी का साहित्य विशेष महत्व रखता है। उनका जीवन साहित्य–साधना का जीवन था। उन्होंने सत्यम, शिवम, सुन्दरम् के आदर्श को अपने लेखन का आधार बनाया। उनकी काव्य–यात्रा विद्यार्थी जीवन से प्रारंभ हुई और जीवन के अंतिम क्षणों तक उन्होंने लेखनी का साथ नहीं छोड़ा।

मूल शब्दः छायावाद, यथार्थ, साहित्य, राष्ट्रीय चेतना, विविधता

रसिक जी ने गद्य और पद्य दोनों में लेखन किया, किंतु विशेषता यह रही कि उन्होंने साहित्य को केवल लिखा ही नहीं, बल्कि जिया भी। उनके लेखन में जीवन की संवेदनाओं का रस, अनुभूति की गहराई और अभिव्यक्ति की सच्चाई समान रूप से उपस्थित हैं। इसीलिए वे अपने नाम के अनुरूप रसिक कहे जाते हैं। आधुनिक हिंदी साहित्य में गद्य का विकास न केवल भाषा की अभिव्यक्ति की शक्ति का प्रमाण है, बल्कि सामाजिक और राष्ट्रीय चेतना का भी द्योतक है। भारतेंदु से आरंभ होकर द्विवेदी, प्रेमचंद और अन्य आधुनिक साहित्यकारों के माध्यम से हिंदी गद्य ने जिस ऊँचाई को प्राप्त किया, उसमें राम प्यारे रसिक जी का योगदान भी विशेष महत्त्व रखता है। सरगुजा की साहित्यिक धारा में रामप्यारे रसिक जी का नाम एक अनुपम प्रतीक के रूप में स्थापित है। उन्हें अक्सर ''सरगुजा के कबीर'' की संज्ञा दी जाती है। उनकी लोकप्रियता का प्रारंभ 1983 से माना जाता है, जब सरगुजा समाचार पत्रिका में प्रकाशित स्तंभ 'नगर कल्लोल' ने उनके साहित्यिक व्यक्तित्व को पाठकों तक पहुँचाया। तब से लेकर उनकी अंतिम श्वास तक उनकी क़लम सतत् सक्रिय रही, और कुल तेरह पुस्तकें प्रकाशित हुईं। जीवन के अंतिम क्षणों तक उनकी लेखनी थमी नहीं। रसिक जी का साहित्य केवल शब्दों का संकलन नहीं, बल्कि उनके व्यक्तित्व और जीवन–दर्शन का दर्पण है। वे मानवीय संवेदनाओं, लोक–संस्कृति और सामाजिक यथार्थ को गहराई से स्पर्श करने वाले रचनाकार थे। गद्य और पद्य दोनों ही विधाओं पर उनकी समान पकड़ थी। उनकी कृतियाँ सरगुजिहा रामायण से लेकर जंगली प्रजातंत्र तक साहित्य की विविध विधाओं में उनकी अद्वितीय रचनाशीलता का प्रमाण देती हैं।

रामप्यारे रसिक का व्यक्तित्व

"हिंदी साहित्य की परंपरा में ऐसे साहित्यकार समय–समय पर हुए हैं, जिन्होंने अपने लेखन से समाज की चेतना को झकझोरा और साहित्य को यथार्थ के धरातल पर उतारकर उसकी सामाजिक प्रासंगिकता को सिद्ध किया। छत्तीसगढ़ की माटी से जुड़ा एक ऐसा ही नाम है – ''रामप्यारे रसिक''। वे केवल कवि या गद्यकार नहीं थे, बल्कि समाजशास्त्री, इतिहास बोध से संपन्न चिंतक, निर्भीक पत्रकार और संघर्षशील व्यक्तित्व थे। रामप्यारे रसिक का वास्तविक नाम राम प्यारे राम था। उनका जन्म 16 सितंबर 1933 को उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जिले के नोखा गाँव में हुआ। पिता श्री गंगाराम कश्यप साहित्य और पत्रकारिता में रुचि रखते थे, जबकि माता श्रीमती बोदो देवी घरेलू और धार्मिक संस्कारों से संपन्न थीं।

दुर्भाग्यवश, रसिक जी की माता का निधन उनके बचपन में ही हो गया। इस कारण बालक रामप्यारे ने मातृत्व का स्नेह अल्पायु में ही खो दिया। पिता ने दूसरी पत्नी मंजरी देवी से पुनर्विवाह किया, जिन्होंने अपने मातृत्व के वात्सल्य से दोनों अबोध बच्चों – ''रामप्यारे और चंपा का पालन–पोषण किया। गंगाराम कश्यप जीविका की खोज में मिर्जापुर छोड़कर छत्तीसगढ़ के अंबिकापुर पहुँचे और यहीं स्थायी रूप से बस गए। यद्यपि जीवन–भर उनका स्वास्थ्य अस्थिर रहा, फिर भी उन्होंने परिवार को सँभालने का हर संभव प्रयास किया। 1959 में उनके निधन के बाद मात्र 26 वर्ष की उम्र में ही रामप्यारे रसिक पर परिवार की सम्पूर्ण जिम्मेदारी आ गई।

रामप्यारे रसिक का शिक्षा एवं बौद्धिक विकास

रसिक जी की प्रारंभिक शिक्षा गद्दी स्कूल, अंबिकापुर से हुई। इसके बाद उन्होंने एडवर्ड हाई स्कूल (वर्तमान मल्टीपरपज़ हायर सेकेंडरी स्कूल) से मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण की। आर्थिक परिस्थितियों के कारण वे औपचारिक उच्च शिक्षा प्राप्त न कर सके, किंतु उनकी जिज्ञासा और अध्ययनशीलता ने उन्हें असाधारण ज्ञान अर्जित कराया।

हिन्दी, उर्दू, अंग्रेज़ी, संस्कृत, भोजपुरी, छत्तीसगढ़ी और सरगुजिहा भाषाओं पर उनका अधिकार था। यात्राओं के दौरान उन्होंने उड़िया और पंजाबी भाषाएँ भी सीखीं। भाषाई बहुआयामिता उनके साहित्य को बहुरंगी बनाती है। उन्होंने केवल भाषा को ही नहीं, बल्कि प्रत्येक भाषा की सांस्कृतिक आत्मा को आत्मसात किया। यही कारण है कि उनका लेखन स्थानीयता में भी वैश्विकता का बोध कराता है। उनकी विद्वत्ता का प्रमाण यह है कि वरिष्ठ वकील और साहित्यकार उनकी टाइप–ड्राफ्टिंग देखकर नतमस्तक हो जाते थे। उन्होंने उर्दू का एक व्यवस्थित शब्दकोश भी तैयार किया, जो आज भी शोधार्थियों और साहित्यकारों के लिए उपयोगी है।

रामप्यारे रसिक का साहित्यिक रुचि एवं पत्रकारिता

राम प्यारे रसिक का साहित्यिक जीवन विविधता और संघर्ष का संगम था। बचपन से ही उन्हें लेखन में रुचि थी। जीवन–निर्वाह

हेतु उन्हें अनेक छोटे–मोटे कार्य करने पड़े, किंतु लेखनी कभी नहीं छोड़ी। उनका व्यंग्य स्तंभ 'नगर कल्लोल' जनता में अत्यंत लोकप्रिय हुआ। वे नगर की समसामयिक घटनाओं को चुटीली शैली में प्रस्तुत करते थे। उनके व्यंग्य की धार इतनी पैनी थी कि बड़े से बड़ा व्यक्ति भी उनकी क़लम से बच नहीं पाता। व्यापारी वर्ग पर व्यंग्य करते हुए उन्होंने उन्हें "गजमीटर के देवता" कहकर संबोधित किया।
1985 में उन्होंने स्वयं का समाचार पत्र 'सरगुजा समाचार' प्रारंभ किया, जिसे गंगा प्रिंटिंग प्रेस से प्रकाशित किया जाता था। इस पत्र के माध्यम से उन्होंने सामाजिक और राजनीतिक मुद्दों पर निर्भीकता से अपनी राय रखी।

रामप्यारे रसिक का साहित्यिक प्रेरणा

उनकी रचनाओं की प्रेरणा उनका संघर्षपूर्ण जीवन ही था। गरीबी, पारिवारिक जिम्मेदारियाँ, समाज की असमानताएँ और व्यवस्था की विसंगतियाँकृये सब उनके साहित्य के मूल स्रोत रहे। उनकी एक प्रसिद्ध पंक्ति –

''लेकर छाले अपने पाँव में, मैं चला रहा अभाव में,
बस पीड़ाओं का ही अब तक करता आया हूँ संचय,
बस इतना ही मेरा परिचय।''[4]

उनके जीवन और साहित्य दोनों का परिचायक है।
उनकी रचनाएँ मात्र साहित्यिक सृजन नहीं थीं, बल्कि समाज की पीड़ाओं की दास्तान थीं। उन्होंने गरीबों, दलितों और वंचितों के जीवन–संघर्षों को शब्द दिए और सत्ता के पाखंड का बेख़ौफ़ उद्घाटन किया। रामप्यारे रसिक का जीवन एक अद्भुत गाथा है–

संघर्ष का प्रतीक,
आत्मसम्मान का आदर्श,
साहित्यिक बहुमुखिता का उदाहरण।

उन्होंने साहित्य और पत्रकारिता को जनता की आवाज़ बनाया। उनकी निर्भीकता, व्यंग्य की धार, भाषाई विविधता और सामाजिक सरोकार उन्हें विशिष्ट बनाते हैं। वे छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक माटी के ऐसे लाल हैं, जिन्होंने अपने साहित्य और जीवन से आने वाली पीढ़ियों को प्रेरणा देने वाली धरोहर छोड़ी है।

राम प्यारे रसिक का कृतित्व

रामप्यारे रसिक का साहित्य हिंदी जगत में उस परंपरा का प्रतिनिधित्व करता है जिसमें साहित्यकार केवल भावनाओं का सर्जक न होकर समाज का मार्गदर्शक, समय का द्रष्टा और संस्कृति का संवाहक भी होता है। उनकी रचनाएँ लोकजीवन की पीड़ा, संघर्ष और आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति हैं। साथ ही, वे साहित्य को आत्मरंजन का साधन नहीं मानते थे, बल्कि उसे लोकमंगल का साधन मानते थे। यही कारण है कि उनकी लेखनी ने सरगुजा के जनमानस को न केवल प्रभावित किया, बल्कि उन्हें अपनी पहचान और सांस्कृतिक अस्मिता के प्रति सजग भी किया।

रामप्यारे रसिक की प्रमुख कृतियाँ

रामप्यारे रसिक की कृतियाँ विधा–विविधता और विषय–विस्तार की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। उन्होंने गीत, भजन, ग़ज़ल, व्यंग्य, गद्य और लोककथा जैसे विविध साहित्यिक रूपों में लेखन किया। उनकी रचनाओं में सरगुजा अंचल की संस्कृति, संवेदना और लोकमानस की झलक स्पष्ट दिखाई देती है।

प्रमुख कृतियाँ

श्वेतांबरा
पूजा के फूल
सरगुजिया रामायण
पलकों में समंदर
सलमा के बेटे
पूजा के फूल
हमारी धरोहर
लोककथाएँ
दर्दों का काफ़िला
अक्षर गीत
माटी के गीत
सतरंगी करौंदा
बांध ले पिरितिया के डोर
क़लाम ए रसिक
जंगली प्रजातंत्र

इन रचनाओं से यह स्पष्ट होता है कि रसिक जी ने साहित्य की विविध विधाओं में अपनी सृजनात्मकता का परिचय दिया और समाज के हर पक्ष को स्पर्श करने का प्रयास किया।

व्यंग्य साहित्य और लोककथाएँ

- **व्यंग्य साहित्य**

रसिक का व्यंग्य साहित्य हिंदी व्यंग्य परंपरा में उन्हें शरद जोशी और हरिशंकर परसाई की श्रेणी में खड़ा करता है। उनकी रचनाएँ केवल हास्य उत्पन्न नहीं करतीं, बल्कि सामाजिक सोच को बदलने की क्षमता रखती हैं।
उनकी प्रमुख व्यंग्य रचनाएँ–
चौर्य कला
कुत्ता आंदोलन
परिवर्तन
मैरिज ब्यूरो
नारद की पाती
चप्पल पुराण
नेताजी की स्वर्ग यात्रा
मौत शाही कुत्ते की

इनमें सरल भाषा और तीखे व्यंग्य का ऐसा अद्भुत संगम है जो पाठक को हंसाते हुए सोचने पर विवश करता है।

लोककथाएँ

''रसिक का लोककथाओं की ओर भी गहरा झुकाव रहा। उन्होंने सरगुजा की मौखिक परंपरा–नानी–दादी की कहानियों को लिपिबद्ध कर साहित्य में स्थायी स्थान दिलाया। उनकी प्रमुख लोककथाएँ हैं – छेरिका छउवा, सरग कर अएना, सोन कटोरा, केतकी रानी, अनुबुझ कहनी, जिवतिया कहनी, करमा बरत कथा,पसेना कर कमाई।'' इन कथाओं में सरगुजा की सामाजिक संरचना, लोकमान्यताएँ और जीवन–दर्शन अंकित हैं।

रामप्यारे रसिक के भजन एवं आध्यात्मिक काव्य

रामप्यारे रसिक के कृतित्व का आध्यात्मिक पक्ष उनके भजन–साहित्य में सर्वाधिक सशक्त रूप से परिलक्षित होता है। ''उनके भजन–संग्रह "श्वेतांबरा" तथा "पूजा के फूल" केवल भक्ति गीतों का संकलन मात्र नहीं हैं, बल्कि एक समग्र जीवन–दर्शन एवं गहन आध्यात्मिक चिंतन के दर्पण के रूप में उभरते हैं। इन भजनों में प्रभु–भक्ति, निर्गुण साधना, कर्म की प्रधानता तथा आत्मा की शुद्धि का आग्रह स्पष्ट दिखाई देता है। तेजी से आधुनिकता की ओर अग्रसर होते समाज में जहाँ संवेदनाएँ एवं मानवीय मूल्य लुप्तप्राय होते जा रहे हैं, वहाँ रसिक के भजन संजीवनी–शक्ति की भाँति कार्य करते हैं।''[21] यह भजन न केवल व्यक्ति को

आत्मचिंतन एवं आत्ममूल्यांकन हेतु प्रेरित करते हैं, बल्कि सामूहिक स्तर पर समाज को पुनः नैतिकता और मानवीयता की ओर लौटने का मार्ग भी दिखाते हैं। इस प्रकार, उनके भजन वर्तमान और भावी पीढ़ियों के लिए एक नैतिक–सांस्कृतिक धरोहर के रूप में स्थापित होते हैं।

विशेष उल्लेखनीय तथ्य यह है कि ''रसिक का भजन–साहित्य केवल पारंपरिक भक्ति–भाव तक सीमित नहीं है। उन्होंने इन्हें समाज सुधारक दृष्टिकोण से भी रचा। उनके निर्गुण भजनों में कर्मप्रधानता की उद्घोषणा मिलती है, साथ ही साथ अंधविश्वास, कुरीतियों एवं पाखंड का प्रखर खंडन भी दिखाई देता है। यही कारण है कि साहित्य–समाज में उन्हें "सरगुजा का कबीर" की उपाधि प्राप्त हुई। उनके "श्वेतांबरा" संग्रह में कबीर और रैदास की संत परंपरा का स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता है, वहीं संत गहिरा गुरु एवं संत धर्मदास की विचारधारा भी उनके काव्य में झलकती है।

ग़ज़लें, गीत और संगीतिक योगदान

रसिक की ग़ज़लें सामाजिक यथार्थ और व्यक्तिगत वेदना का मार्मिक चित्रण करती हैं। दर्दों का काफ़िला उनका प्रमुख ग़ज़ल –संग्रह है, जिसमें वे लिखते हैं –

''सीने में जितने दर्दों को रक्खा था पालकर,
अब रख दिया है सामने सबको उछाल कर।
दावा जो कर रहे थे बदल देंगे वक्त को,
दिखला रहा हूं उनको आईना निकाल कर।''

यहाँ उनकी ग़ज़लें केवल व्यक्तिगत भावनाएँ नहीं, बल्कि समाज के विडंबनापूर्ण यथार्थ का भी उद्घाटन करती हैं। गीतों में उन्होंने श्रृंगार, वीर, वात्सल्य और भक्ति सभी रसों को अपनाया। भोजपुरी गीत–संग्रह बांध ले पिरितिया के डोर उनकी श्रृंगारप्रधान रचनाओं का सशक्त उदाहरण है।

''1968 में सरगुजा संदेश पत्र में साहित्य संपादक नियुक्त होने के बाद उन्होंने "रामानुज कला परिषद" की स्थापना में भी योगदान दिया। इस परिषद के माध्यम से उनके गीतों को अनेक कलाकारों ने स्वरबद्ध किया और जन–जन तक पहुँचाया।''

रामप्यारे रसिक का कृतित्व बहुआयामी है कृभक्ति, व्यंग्य, ग़ज़ल, गीत, लोककथा और गद्य सभी में उन्होंने अपनी अमिट छाप छोड़ी। वे केवल साहित्यकार नहीं थे, बल्कि जन–जन की पीड़ा के प्रवक्ता, सामाजिक चेतना के प्रणेता और सरगुजा संस्कृति के संवाहक थे। उनकी रचनाएँ आज भी सरगुजा अंचल के साहित्यिक और सांस्कृतिक जीवन में प्रेरणा स्रोत हैं।

साहित्यिक योगदान और सांस्कृतिक गतिविधियाँ

संपादन और सांस्कृतिक गतिविधियों के क्षेत्र में भी रामप्यारे रसिक का योगदान उल्लेखनीय है। वर्ष 1968 में वे "सरगुजा संदेश" साप्ताहिक पत्र के साहित्य संपादक नियुक्त हुए और उन्होंने अपने दायित्वों का निर्वहन अत्यंत निष्ठा एवं समर्पण के साथ किया। इस अवधि में उनकी निकटता सरगुजा राजपरिवार के सदस्य स्वर्गीय रविन्द्र प्रताप सिंह से हुई। साहित्य एवं संगीत के प्रति सम्मान और अनुराग के कारण "रामानुज कला परिषद" का गठन हुआ, जिसने सरगुजा की कला–संस्कृति के विकास में मील का पत्थर स्थापित किया।

''इस परिषद से जुड़े नूरुद्दीन खान, चंद्र भूषण मिश्रा, राजेंद्र गुप्ता, रामचंद्र गोस्वामी, प्रकाश वर्मा, सुदर्शन कश्यप, सावित्री खन्ना, मोहम्मद शाहिद खान, मृदुल गोस्वामी, उषा गुप्ता और वंदना दत्ता जैसे प्रमुख कलाकारों ने रसिक के गीतों को सुरों में ढ़ालकर जन–जन तक पहुँचाया। परिणामस्वरूप, उनका साहित्य केवल पठन तक सीमित न रहकर जनमानस की कंठध्वनि बन गया। यह परंपरा आज भी जीवित है और सरगुजा के साहित्य प्रेमियों को सतत प्रेरणा प्रदान कर रही है।''

उनका ग़ज़ल संग्रह "दर्दों का काफ़िला" जीवन के भोगे हुए यथार्थ और समाज के बेनक़ाब सच की मार्मिक अभिव्यक्ति है। यह संग्रह वास्तव में उनके हृदय में संचित वेदनाओं का काव्यात्मक दस्तावेज़ है। ग़ज़ल की यह पंक्ति–

"सीने में जितने दर्दों को रखा था पालकर,
रसिक ने रख दिया सबको निकालकर"[24]

उनके सम्पूर्ण ग़ज़ल लेखन की आत्मा कही जा सकती है। ग़ज़ल संग्रह में झोपड़ियों की व्यथा से लेकर महलों की बेवफ़ाई तक, समय की खींची गई हर तस्वीर प्रतिबिंबित होती है। इससे स्पष्ट होता है कि रसिक की ग़ज़लें व्यक्तिगत अनुभूतियों के साथ–साथ सामूहिक सामाजिक यथार्थ को भी स्वर प्रदान करती हैं।

भाषा, बोली और शैली

संग्रह की एक कथा सरगुजिहा बोली में लिखी गई है। कुछ कथाओं में भोजपुरी और अन्य बोलियों का प्रयोग भी हुआ है, जिससे संग्रह को "इंद्रधनुषी रंग" प्राप्त होता है। पांडे जी के अनुसार,–''यह बहुभाषिकता संग्रह को न केवल स्थानीय रंग प्रदान करती है, बल्कि इसे अधिक जीवंत और जन–संवेदनशील भी बनाती है।

उपसंहार

स्पष्ट होता है कि रामप्यारे रसिक का साहित्य भक्ति, सामाजिक चेतना और कलात्मक अभिव्यक्तिकृतीनों का अद्भुत समन्वय है। उनके भजन जहाँ आध्यात्मिकता और मानव–कल्याण का संदेश देते हैं, वहीं उनकी ग़ज़लें और गीत जीवन की वेदनाओं और यथार्थ का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करती हैं। संपादन और सांस्कृतिक गतिविधियों के माध्यम से उन्होंने न केवल साहित्य–सृजन किया, बल्कि सरगुजा की कला–संस्कृति को भी नई दिशा दी। इस प्रकार, रसिक का कृतित्व बहुआयामी है और यह आने वाली पीढ़ियों के लिए साहित्यिक एवं सांस्कृतिक प्रेरणा का अविरल स्रोत बना रहेगा।

संदर्भ

1. रसिक राम प्यारे (2013) ,ग़ज़लें–दर्दों का काफ़िला–रसिक राम प्यारे प्रकार–ग़ज़ल संग्रह वर्ष, 2013 पृष्ठ संख्या– 20।
2. रसिक राम प्यारे (2020), जंगली प्रजातं–प्रकार – हास्य–व्यंग्य एवं लघु कथाएँ– पृष्ठ संख्या 40।
3. रसिक रामप्यारे (1990), ष्वेतांबरा भजनावली –प्रथम संस्करण।
4. रसिक रामप्यारे (2017),ष्वेतांबरा भजनावली – प्रथम संस्करण द्वितीय संस्करण – पृष्ठ संख्या, 45।
5. रसिक रामप्यारे (2013) माटी के गीत (सरगुजिहा)–प्रकार – लोकभाषा गीत संग्रहवर्ष ,पृष्ठ –33।
6. रसिक राम प्यारे (2005), सलमा के बेटे – कहानी संग्रह–, पृष्ठ संख्या – 36।
7. रसिक राम प्यारे (1999) सरगुजिहा रामायण– पृष्ठ संख्या – 33।
8. रसिक रामप्यारे (2012), हमारी धरोहर का संग्रहण (लोक कथाएँ, सरगुजिहा किस्सा–कहानी) ,पृष्ठ संख्या – 43।
9. रसिक रामप्यारे (2012), हमारी धरोहर का संग्रहण (लोक कथाएँ, सरगुजिहा किस्सा–कहानी),पृष्ठ संख्या – 19।
10. श्रीवास्तव डॉ. जे. पी., पहाड़ी कोरवाओं के सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास का अनुशीलन पृष्ठ संख्या – 11।
11. अम्बष्ट शशिकला (1991) सरगुजा राज्य का प्रशासनिक अध्ययन–स्थिति – अप्रकाशित।